जैन व्रत कथायें

अनन्त चौदस व्रत, रविव्रत, दशलक्षण व्रत, आकाश पंचमी व्रत, पुष्पांजलि व्रत, रत्नत्रय व्रत, मुक्तावली व्रत, नंदीश्वर व्रत, रोहिणी व्रत, सुगंध दशमी व्रत, अखै दशमी व्रत, ऋषि पंचमी व्रत, निर्जर पंचमी व्रत, कोकला पंचमी, पंचमी व्रत, शील व्रत, त्रैलोक्य तिलक (रोट तीज) व्रत, निर्दोष सप्तमी व्रत, रक्षाबंधन कथा, दान कथा व सप्त व्यसन कथा

व्रतों की जापों सहित

सकलितकर्त्ता

सुभाष जैन

1980

सरोज प्रकाशन, २५४३ धर्मपुरा, देहली-६

मूल्य २ रुपए

दो शब्द

जैन व्रतों की महिमा का दिग्दर्शन कराने वाले 'जैन व्रत कथाओं' के इस संकलित ग्रन्थ के दृष्टान्तों से स्पष्ट है कि किस प्रकार विधिपूर्वक व्रत सम्पन्न करने से प्राणीजन इस भव में तो सुख भोगते ही हैं परभव में भी सुख प्राप्त करते हैं।

परन्तु व्रत हमेशा शारीरिक शक्ति व समय के प्रभावानुसार ही करने चाहिये। एक ऐतिहासिक तथ्य है-तीर्थंकर ऋषभदेव ने उनका शरीर बड़ा होने से, छः मास का व्रत किया परन्तु तीर्थंकर महावीर ने सिर्फ बेला ही किया, क्योंकि उनका शरीर छोटा था।

अक्सर देखा गया है कि शरीर में शक्ति तो होती नहीं परन्तु प्राणीजन व्रत ले लेते हैं। परिणाम यह होता है कि भूखे और कमजोर आदमी को व्रत वाले दिन गुस्सा बहुत आता है और वह परिवार जन पर बिगड़ता रहता है इस प्रकार के व्रत करने से ना करना ज्यादा उचित है। गर्भवती व गोद के बच्चे वाली स्त्रियों को भी व्रत कदापि नहीं करना चाहिये।

१५०७ कूंचा सेठ, देहली-६ —सुभाष जैन

* नवकार मन्त्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं

चत्तारि मंगलं-अरिहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं साहू मंगलं, केवलि पणत्तो धम्मो मंगलं।
चत्तारि लोगुत्तमा अरिहंत लोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि पणत्तो धम्मो लोगुत्तमा।
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि - अरिहंत सरणं पव्वज्जामि, सिद्ध सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि पणत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि।

भजन : फिल्म महासती मैंना सुन्दरी

लेo जम्बू प्रसाद जैन गायक - मन्नाडे व साथी

मन्त्र जपो नवकार, मनवा मन्त्र जपो नवकार
पाँच पदो के पैंतीस अक्षर, है सुख के आधार
मनवा मन्त्र जपो नवकार ...

अरिहंतो का सुमरण करलें
सिद्ध प्रभू का नाम तू जपले, आचार्य सुख कार
मनवा मन्त्र जपो नवकार ....

उपाध्याय को मन में ध्याले
सर्व साधु को शीश नवाले, होवे भव से पार
मनवा मन्त्र जपो नवकार ...

धनहीन सुख सम्पत्ति पावें
मन वांछित हर काम बनावे, सुखी रहे परिवार
मनवा मन्त्र जपो नवकार ...

रोग शोग को दूर भगावे
जन्म जरा मृत दोष मिटावें, भव दुःख भजन हार
मनवा मन्त्र जपो नवकार...

णमो अरिहंताण णमो सिद्धाण
णमो आयरियाण णमो उवज्झायाण
णमो लोए सव्वसाहूण
णमो अरिहंताण
णमो सिद्धाण
णमो आयरियाण
णमो उवज्झायाण
णमो लोए सव्वसाहूणं

णमो ! णमो !! णमो !!!

आकाश पंचमी व्रत कथा

तिलकपुर नगर में भद्रशाह नामक एक व्यापारी रहता था। उसकी पत्नी का नाम था नन्दा। जिससे उसे विशाला नाम की पुत्री उत्पन्न हुई। मुख पर सफेद कुष्ट हो जाने के कारण विशाला की सुन्दरता नष्ट हो गई थी।

एक दिन एक वैद्य घूमता घामता तिलकपुर नगर में आया। जब विशाला को उसे इलाज हेतु दिखाया गया तो उसने सिद्ध चक्र की आराधना करके औषधि दी जिससे विशाला का कुष्ट दूर हो गया। भद्रशाह और उसकी पत्नी की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। उन्होंने फौरन शुभलग्न में विशाला का विवाह वैद्य के साथ कर दिया।

वैद्य विशाला सहित देशाटन करता हुआ चित्तौड़गढ़ की तरफ आया जहां भीलों के एक दल ने उसको मारकर उसकी सारी सम्पत्ति छीन ली। विशाला किसी तरह अपने आपको उनकी

क्रूर नज़रों से बचाकर नगर के जिनालय में आगई। वहाँ एक मुनिराज विराजमान थे। विशाला ने बड़ी विनय के साथ उन्हें प्रणाम किया और अपनी दुःख गाथा सुनाई।

'बेटी! सुनो'-मुनिराज ने कहना शुरु किया—'यह जीव अपने पूर्व जन्मके शुभ कर्मों से सुख और अशुभ कर्मों से दुःख भोगता है। तू भी पूर्व जन्म में इसी नगर में वेश्या थी। एक समय सोमदत्त नामक मुनि इस नगर में पधारे। कुछ मिथ्यात्वी विधर्मियों ने मुनि से वाद विवाद किया और अन्त में हार कर मुनि को भ्रष्ट करने हेतु तेरा सहारा लिया। तूने अनेकों हाव भावों से मुनी को रिझाने का प्रयत्न किया। परन्तु जैसे सूर्य पर थूकने से थूक सूर्य का कुछ न बिगाड़ कर उल्टा मुँह पर गिरता है उसी प्रकार मुनिराज तो अचल मेरुवत् स्थिर रहे परन्तु तू हारकर लौट आई।

बाद में तुझे कोढ़ हो गया और तू मर कर चौथे नर्क में गई। वहाँ से आकर तू भद्रशाह के

यहाँ पुत्री हुई। इस जन्म में भी तुझे कोढ़ हुआ। पिंगल वैद्य ने तुझे अच्छा किया और उसी के साथ तेरा विवाह भी हुआ। पूर्व पाप के उदय से चोरों ने उसे मार डाला और तू जान बचाकर यहाँ तक आ गई। अब यदि तू धर्माचरण करेगी तो इस पाप से शीघ्र मुक्त हो सकेगी।

२५ मूल दोषों का त्याग कर तब निर्मल सम्यक्-दर्शन हो सकेगा। अहिंसा आदि १२ व्रतों के पालन के साथ २ आकाश पंचमी व्रत का पालन कर।

व्रत विधि पूछने पर मुनिराज ने बताया-'यह व्रत भादों सुदी पंचमी को किया जाता है। इस दिन चारों प्रकार का आहार त्याग कर उपवास धारण करें और जिनालय में अष्टद्रव्य से भगवान की अभिषेक पूर्वक पूजन करें। रात्री में खुले स्थान में बैठ कर जागरण भजन करें और वहां पर सिंहा-सन रखकर श्री चौबीस तीर्थंकरों की प्रतिमा स्थापन करें। यदि उस समय वर्षा आदि के कारण कितने ही उपसर्ग आवें तो सहन करे, विचलित न हों।

तीनों समय महामंत्र नवकार के १०८ जाप करें। इस प्रकार ५ वर्ष तक करके अन्त में उद्यापन करें। इतना कहकर मुनिराज चुप हो गये।

विशाला ने श्रद्धापूर्वक बारह व्रत स्वीकार किये और आकाश पंचमी व्रत का भी विधि सहित पालन किया जिसके प्रभाव से वह चौथे स्वर्ग में मणिभद्र देव हुई। वहाँ की सात सागर की आयु पूर्णकर उज्जैन नगर में प्रियंगु सुन्दर नामक राजा के यहां तारामती रानी से सदानन्द नामक पुत्र हुआ। अनेकों वर्षों तक राज्योचित सुख भोगने के बाद एक दिन एक मुनिराज का उपदेश सुनकर उसे वैराग्य उत्पन्न हो गया। उसने जिन दीक्षा ले ली और केवल ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गया।

जिस प्रकार व्रत के प्रभाव से एक वणिक कन्या विशाला ने स्वर्ग और मोक्ष प्राप्त कर लिया उसी प्रकार जो कोई भी श्रद्धापूर्वक इस व्रत को पालेगा, निश्चय ही मोक्षपद के उत्तम सुखों को प्राप्त करेगा।

*

रविव्रत कथा

बनारस नगर में मतिसागर नामक एक सेठ रहता था। गुण सुन्दरी नामक पत्नी से उसके रूपवान गुणवान सात पुत्र उत्पन्न हुए। छह पुत्रों का विवाह तो हो चुका था परन्तु सातवाँ पुत्र गुणधर क्वाँरा था।

एक बार एक मुनिराज नगर में पधारे। राजा प्रजा सहित उनके दर्शनों को गया। मुनिराज ने उन्हें धर्म का उपदेश देकर आत्म कल्याण का मार्ग बताया। सेठानी गुण सुन्दरी भी वहां उपस्थित थी। जब मुनिराज उपदेश दे चुके तो सेठानी ने बड़ी विनय के साथ मुनिराज से कहा--महाराज! मुझे भी कोई ऐसा व्रत दीजिये जिससे कभी भी दुःख और दरिद्रता न हो।

पुत्री! तुम रविवार के व्रत किया करो -- कह कर मुनिराज ने उसे व्रत की विधि बताई ... आषाढ़

सुदी में अन्तिम रविवार को प्रातःकाल भक्तिपूर्वक भगवान की पूजा करके व्रत या एकाशना करो। उस दिन नमक इत्यादि रसों का त्याग करके ब्रह्मचर्य का पालन करो। साधर्मी वात्सल्य के लिये अपनी शक्तिनुसार कोई भी ८१ फल लेकर ९ श्रावकों के घर बाँटों। इस प्रकार लगातार नौ साल तक हर साल में नौ बार यह व्रत करो। एक वर्ष में प्रत्येक रविवार को यह व्रत करके इस व्रत को एक वर्ष में भी समाप्त किया जा सकता है। इस व्रत को करने से सुख सम्पदा में वृद्धि होती है।

मुनिराज से भक्तिपूर्वक इस व्रत को लेकर के सेठानी अपने घर वापिस आ गई और पति व पुत्रों को व्रत लेने का हाल कहा। परिवार के सदस्यों ने ना सिर्फ व्रत की निन्दा की बल्कि यहाँ तक कहा—'यह व्रत तो उन श्रावकों के लिए है। जो घास काट कर सिर पर रखते हैं। हमारे यहाँ किस चीज की कमी है जो यह व्रत करें।'

व्रत की निन्दा करने के परिणाम स्वरूप कुछ

ही दिनों में मतिसागर सेठ की सारी लक्ष्मी नष्ट हो गई और वे घोर दरिद्री हो गये।

एक दिन जब माता पिता अत्यन्त दुखी हो रहे थे तो उनका दुःख छोटे पुत्र गुणधर से न देखा गया। उसने उन्हें ढाढस देते हुए समझाया कि आप चिन्ता न करो। हम सातों भाई धन कमाने परदेश जायेंगे। अगर अच्छे दिन न रहे तो बुरे दिन भी नहीं रहेंगे।

इस प्रकार माता पिता को समझा कर गुणधर अपने छहों भाईयों व भावजों सहित अयोध्या को चला गया। वहां जाकर वे सातों भाई जिनदत्त नामक सेठ के पास पहुँचे और बड़ी विनय के साथ निवेदन किया—सेठ जी! हम आपकी शरण आये हैं, हमें कुछ काम दिलायें।

तुम कौन हो और कहां से आये हो? जिनदत्त सेठ के पूछने पर गुणधर ने कहा—हम बनारस के मतिसागर सेठ के पुत्र हैं। कुछ समय पहिले हम सुख सम्पदा से सम्पन्न थे, परन्तु अब घोर

दरिद्री हो गये हैं। इसी लिये जीवोपार्जन हेतु आप के नगर में आये हैं।

जिनदत्त सेठ गुणधर की बातों से बड़ा प्रभावित हुआ और उन्हें व्यापार करने के लिए कुछ रुपया दे दिया। सातों भाई बड़े प्रसन्न हुए और रुपया लेकर कारोबार करने लगे।

पुत्रों के वियोग से मतिसार सेठ और सेठानी गुण सुन्दरी बहुत दुखी रहने लगे। एक दिन एक अवधिज्ञानी मुनि नगर में पधारे। सेठ और सेठानी उनके दर्शन के लिए गये और श्रद्धापूर्वक हाथ जोड़ कर पूछा–महाराज! हमने ऐसा कौनसा पाप किया है जिससे हमारी सारी सम्पदा नष्ट हो गई, और हमारे पुत्रों को जीवन यापन के लिए परदेश जाना पड़ा।

रविव्रत की निन्दा करने के परिणाम स्वरूप तुम्हें यह दिन देखने पड़े हैं—अवधिज्ञान से जान कर मुनिराज ने बताया।

अब तो सेठ और सेठानी को अपने किये पर भारी पश्चाताप हुआ और उन्होंने मुनिराज से इस का प्रायश्चित पूछा। मुनिराज ने कहा - तुम रवि-व्रत किया करो। इससे तुम्हारे दुःख दूर होंगे और पुत्र भी वापिस आयेंगे।

सेठ और सेठानी ने रविव्रत करने आरम्भ कर दिये। कुछ ही दिनों में उनके बीते हुये दिन लौट आये और वे पुनः सम्पन्न हो गये।

उधर एक दिन बनारस का एक व्यास अयोध्या आया। गुणधर ने उस व्यास की बड़ी खातिर की और भोजन के लिये घर ले गया, जहाँ व्यास ने भरपेट भोजन किया। जब व्यास भोजन करके जाने लगा तो गुणधर ने उसे दक्षिणा के रूप में एक टका भेंट किया जिसे व्यास ने अपना अपमान समझा। क्रोधित होकर वह वहाँ से चला आया और जिनदत्त सेठ के पास आकर उसके कान भर दिये। उसके बहकावे में आकर जिनदत्त ने सातों भाईयों से अपनी पूँजी वापिस ले ली। अब सातों भाई फिर

दरिद्री हो गये। वह जंगल से घास काटते और सिर पर ढोकर शहर लाते जिससे उन्हें पेट भरने लायक भोजन मिल जाता था।

इस प्रकार वह अपना जीवनयापन करने लगे। एक दिन गुणधर को बड़ी जोर की भूख लगी। वह अपनी भावज के पास आया और खाना माँगने लगा। उसकी भावज क्रुद्ध होकर बोली—'पहिले तुम घास काटकर लाओ तभी खाना मिलेगा।'

गुणधर को बहुत बुरा लगा। वह जंगल में गया और घास काटकर एक गट्ठर सिर पर रख कर ले आया। जब वह वापिस भावज के पास आया तो भावज ने उससे पूछा-'दराँत कहाँ है।'

गुणधर दराँत जंगल में भूल आया था। इस पर भावज को और भी क्रोध आ गया। वह क्रोधित स्वर में बोली-'पहले दराँत ले आओ तभी खाना मिलेगा।' गुणधर के पास कोई दूसरा चारा भी न था। वह पुनः वापिस जंगल में गया। वहाँ उसने देखा कि दराँत से एक विशालकाय सर्प लिपटा

हुआ था। यह देखकर गुणधर डर गया किन्तु फिर उसने थोड़ी हिम्मत की और हाथ जोड़कर नागराज से कहा-'नागराज! या तो आप मेरी दराँत छोड़ दें वरना आप मुझे भी डस लें क्योंकि इसके बिना मैं वापिस घर नहीं जा सकता।'

इस प्रार्थना पर स्वर्ग में धरणेन्द्र का आसन कंपायमान हुआ। अवधिज्ञान से गुणधर को मुसीबत में जानकर धरणेन्द्र ने उसकी सहायता के लिये पद्मावती को भेजा।

पद्मावती ने बालक के सामने प्रगट होकर बहुत सी सम्पति दी और उससे कहा कि भय मत करो। पार्श्वनाथ स्वामी का सदा स्मरण करो और रविवार के दिन व्रत किया करो। इतना कहकर पद्मावती अन्तर्ध्यान हो गई

गुणधर सम्पति पाकर बहुत हर्षित हुआ और घर जाकर अपने भाईयों को सारी कहानी कह सुनाई। भाई भी बहुत हर्षित हुये और धर्म में दत्त चित्त होकर प्रत्येक रविवार को व्रत करने लगे।

एक दिन एक चुगलखोर ने वहाँ के राजा को चुगली कर दी कि कुछ दिन पहले सात भाई इस नगर में काम धंधे की तलाश में आये थे। कुछ ही दिनों में उनके पास न जाने कहाँ से इतनी सम्पत्ति टूट पड़ी कि वे उसे दोनों हाथों से लुटा रहे हैं।

राजा ने फौरन कोतवाल भेजा। कोतवाल के साथ जब सातों भाई राजदरबार में आये तो उनके व्यक्तित्व को देखकर राजा मुग्ध होगया। उसने उन्हें योग्य आसन पर बैठा कर पूछा-'मेरे मन में एक जरा सा संदेह है कि तुम्हारे पास इतना धन कहाँ से आया।'

गुणधर ने राजा को बनारस नगर से लेकर पद्मावती द्वारा सम्पत्ति देने तक की सारी कहानी कह सुनाई। जिसे सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और मंत्रियों से राय करके अपनी पुत्री का विवाह गुणधर के साथ कर दिया।

कुछ समय बाद सातों भाई अपने माता-पिता के पास बनारस आ गये और वहाँ बहुत समय तक सुख भोगते रहे।

इस प्रकार जो प्राणी रविव्रत करेंगे उन्हें भी किसी प्रकार के कष्ट नहीं होंगे और परभव में भी सुख प्राप्त होंगे।

*

रवि व्रत की जाप

ओ३म् नमो भगवते चिंतामणि पार्श्वनाथ सप्तम्फण मंडिताय। ओ३म् ह्रीं श्रीं धरणेन्द्र पद्मावती सहिताय मम ऋद्धि वृद्धि सौख्यं कुरु कुरु स्वाहा।

रविवार को पार्श्वनाथ का पूजन करके १०८ बार जप करें।

अखैदशमी व्रत

श्रावण सुदि दशमी को सही॥ अखैदशमी व्रत को जन गही। प्रोष करै शीलयुक्त सार। तसुमरमाद वरष दशधार।

दशलक्षण व्रत कथा

विशालाक्षा नगर के राजा पीतंकर व रानी प्रियकरिणी की पुत्री मृगांक रेखा, उनके मंत्री मतिशेखर व उसकी पत्नी शशिप्रभा की पुत्री काम सेना, नगर सेठ गुणसागर की पुत्री मदन रेखा और लक्षभद्र नामक एक दूसरे नगर सेठ की पुत्री रोहिणी इन चारों कन्याओं में, एक ही गुरु के पास शिक्षा लेने के कारण परस्पर अत्यन्त प्रेम था।

एक दिन चारों कन्याएँ वसंत ऋतु में वन क्रीड़ा को गई। वन में एक मुनिराज बैठे हुये थे। चारों ने बड़ी भक्ति से मुनिराज की वंदना की और पूछा-'महाराज! स्त्री पर्याय छूटे, ऐसा कोई उपाय बताइये।'

'इसके लिये तुम दशलक्षण व्रत करो'-मुनिराज ने उन्हें व्रत विधि बतानी शुरू की-'भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष में पंचमी से चतुर्दशी तक नित्य पूजन करो, उत्तम क्षमादि दस धर्म धारण करो। तीनों काल सामायिक करो। इस प्रकार दस दिन तक

नियमित करो। उत्तम व्रत तो यह है कि दसों दिन तक अनशन करो। मध्यम व्रत यह है कि कुछ कांजी ले ली जाय या फिर दशों दिन एकाशन किया जाय। इन दिनों भूमि पर शयन करो और पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करो। दस वर्ष तक विधि-पूर्वक इन व्रतों को करने के बाद उद्यापन करो। उद्यापन में यथाशक्ति शास्त्रों का दान करो। यदि उद्यापन की शक्ति न हो तो दूना व्रत करो।'

चारों कन्याओं ने मुनिराज से भक्तिपूर्वक दश लक्षण व्रत धारण किये। उन्होंने व्रत पूर्ण किये और विधिपूर्वक उनका उद्यापन किया। इस व्रत के प्रभाव से वे चारों कन्याएँ दशवें स्वर्ग में ऋद्धिधारी देव बनीं।

वहाँ की सोलहसागर की आयु भोगने के उपरांत वे चारों देव उज्जैनी नगरी के राजा स्थूलभद्र की रानी लक्ष्मीमति के गर्भ में आये। उनके नाम क्रमशः देवप्रभ, गुणचंद्र, पद्मप्रभ और पद्मसारथी थे। वे चारों अत्यंत सुन्दर थे। युवा होने पर उनका विवाह विमलप्रभ राजा की रूपवान चार कन्याओं के साथ हो गया।

जब राजा स्थूलप्रभ वृद्ध हो गये तो उन्होंने राजपाट बड़े पुत्र को देकर मुनि दीक्षा ले ली। अब चारों ही धर्म और न्यायपूर्वक राजकाज चलाने लगे। एक दिन चारों का मन सांसारिक विषय वासनाओं से विरक्त हो गया। उन्होंने मुनिव्रत धारण करके घोर तपस्या की और चारों घातिया कर्मों का नाश कर केवल ज्ञान प्राप्त किया। वे विविध क्षेत्रों में बिहार करते हुये अपने उपदेश से अनेकों भव्य जीवों का कल्याण करने लगे। अन्त में, वे अघातिया कर्मों का भी नाश करके सिद्ध परमेष्ठी बन गये और सिद्धालय में जा विराजे।

इस प्रकार, जो प्राणी दशलक्षण व्रत धारण करेंगे, वह इह भव और परभव दोनों में सुख पायेंगे।

दशलक्षण व्रत की जापें

समुच्चयः- ओ३म् ह्रीं श्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्य
शौच संयम तपस्त्यागाकिंचन्य ब्रह्मचर्य
धर्माङ्गाय नमः।

पृथक जापें

१. ओ३म् ह्रीं श्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय नमः
२. ओ३म् ह्रीं श्रीं उत्तममार्दवधर्मांगाय नमः
३. ओ३म् ह्रीं श्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय नमः
४. ओ३म् ह्रीं श्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय नमः
५. ओ३म् ह्रीं श्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय नमः
६. ओ३म् ह्रीं श्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय नमः
७. ओ३म् ह्रीं श्रीं उत्तमतपधर्मांगाय नमः
८. ओ३म् ह्रीं श्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय नमः
९. ओ३म् ह्रीं श्रीं उत्तम आकिंचन्य धर्मांगाय नमः
१०. ओ३म् ह्रीं श्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय नमः

अनन्त चौदश व्रत कथा

एक बार राजा श्रेणिक, विपुलाचल पर्वत पर भगवान महावीर के समवशरण में बैठे धर्मचर्चा कर रहे थे। तभी एक विद्याधर समवशरण में आया। उसे देखकर राजा श्रेणिक को उसके विषय में जानने की इच्छा हुई। उन्होंने गौतम गणधर से अपनी इच्छा व्यक्त की।

गौतम गणधर ने उस विद्याधर के बारे में इस प्रकार वर्णन शुरू किया—

विजयानगर के राजा मनोकुम्भ के श्रीमती रानी से अरिंजय नामक पुत्र था। अपने पूर्व जन्मों के शुभ कर्मों से वह इस जन्म में सुखों को भोग रहा था। इसके पूर्व जन्म की कथा इस प्रकार है—

कौशल देश में सोम शर्मा नामक एक ब्राह्मण रहता था। उसकी पत्नी का नाम था—सोमिल्या। पूर्व जन्म के अशुभ कर्मों के कारण उसे सुख नसीब न था। इधर-उधर भटकता हुआ एक दिन वह तीर्थंकर अनन्त नाथ के समवशरण में आया। उसने भगवान को बड़ी विनय के साथ नमस्कार किया और कहने लगा-भगवन्! मैंने ऐसे क्या पाप किये हैं जिनके कारण मुझे यह दुःख भोगने पड़ रहे हैं आप मुझे इन दुःखों से छुटकारा पाने का उपाय बताइये।

ब्राह्मण की बात सुनकर भगवान् के गणधर ने उत्तर दिया-'तुम अनन्त चौदस व्रत किया करो'

'यह व्रत कैसे किया जाता है और इसका

विधान क्या है?—ब्राह्मण के पूछने पर, गणधर ने बताया—भादव शुक्ला चतुर्दशी को स्नानादिक क्रियाओं से निवृत्त हो भगवान का अभिषेक सहित पूजन करो। रात्री को भजन सहित जागरण करो। इस प्रकार चौदह वर्ष तक लगातार यह व्रत पूर्ण करने के बाद श्रद्धानुसार उद्यापन करो। उद्यापन में शास्त्रों का दान करो। यदि उद्यापन करने की शक्ति नहीं हो तो दुगने व्रत करो।'

ब्राह्मण ने इसी प्रकार अनन्त चौदश व्रत किये। इससे उसके दुःखों का नाश हो गया और अपने अन्तिम समय में सन्यास मरण करके वह चौथे स्वर्ग में देव हुआ। वहाँ की आयु पूर्ण करने के बाद, यह अरिंजय हुआ। उसने ही आकर अभी भगवान् को प्रणाम किया था।

एक दिन राजा अपने सिंहासन पर सुख से बैठा हुआ था। अचानक उसकी दृष्टि आकाश की तरफ उठ गई। उसने देखा—आकाश में एक बादल आया और थोड़ी देर में वह छिन्न-भिन्न हो गया।

राजा ने सोचा-'मनुष्य का जीवन भी इसी बादल की तरह क्षणभंगुर और चंचल है। इस जीव का क्या भरोसा कब शरीर छोड़कर निकल भागे। इसलिये शेष जीवन में तो आत्म कल्याण कर लेना चाहिये।' यह सोचकर राजा ने अपना राजपाट पुत्र को सौंप कर स्वयं जिन दीक्षा ले ली और घोर तपस्या करके मोक्ष प्राप्त किया। उसकी रानी भी अनन्त चौदस व्रत के प्रभाव से अच्युत स्वर्ग में देव बनी और वहाँ से चलकर राजा बनी। यथा-समय उसने भी दीक्षा लेकर मोक्ष प्राप्त किया।

'इस प्रकार, हे श्रेणिक! जो जीव अनन्त चौदस व्रत विधिपूर्वक पालन करते हैं, वह स्वर्ग और मुक्ति दोनों सुख भोगते हैं।'

अनन्त चतुर्दशी जाप

ओं ह्रीं अर्हं अनन्त केवली भगवान अनंतदान लाभ भोगोपभोग वीर्याभिवृद्धिं कुरु कुरु स्वाहाः।

रत्नत्रय व्रत

विदेह क्षेत्र में कच्छवती नामक एक देश था। उसमें शोकपुर नामक नगर का राजा वैभव था। वह बड़ा धर्मात्मा था और इन्द्र की तरह सुखों को भोगता हुआ समय व्यतीत कर रहा था।

एक दिन बनमाली ने आकर राजा से निवेदन किया—महाराज! वन में विपुल बुद्धि प्रभु पधारे हैं। यह सुनकर राजा अति हर्षित हुआ और उसने अपने गले से रत्नजड़ित हार उतार कर माली को प्रदान कर दिया और स्वयं परिवार सहित मुनिराज के दर्शनार्थ वन को गया।

मुनिराज ने धर्मोपदेश देकर सब को कल्याण का मार्ग बताया। मुनिराज जब उपदेश दे चुके तो राजा वैभव ने बड़ी विनय के साथ हाथ जोड़ कर मुनिराज से रत्नत्रय व्रत की विधि पूछी।

मुनिराज ने कहना आरम्भ किया—'भाद्रपद शुक्ला द्वादशी को प्रातःकाल जिनालय में जाकर अष्टद्रव्य से जिनेन्द्रदेव की भक्तिपूर्वक पूजन करनी

चाहिये, जिनालय में जहाँ आवश्यकता हो वहाँ जिन विम्ब की स्थापना करनी चाहिये। सोने. चांदी, तांवा, पीतल अथवा भोजपत्र पर यन्त्र बनावें जिसमें रत्नत्रय के गुण लिख ले, जैसे सम्यक्दर्शन के निःशंकादिगुण, सम्यक्ज्ञान के निःसंशयादि तथा सम्यक् चारित्र के अहिंसादि। इनकी पूजा करें, इन का पालन करें और इनकी भावना भावें। १०८ लोंग लेकर इनके मन्त्र की जाप दे। इस प्रकार भादों माघ और चैत्र तीनों दशलाक्षणी में तेरह वर्ष तक करें और व्रत धारण करे। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे। उद्यापन में जहां आवश्यकता हो, वहाँ विम्ब प्रतिष्ठा करावें, तीर्थक्षेत्र का जीर्णोद्धार करावें कोई शास्त्र प्रगट करावें और उनका वितरण करावें।

राजा ने भक्तिपूर्वक व्रत का पालन किया। यथा समय भगवान् का अभिषेक, पूजन और रात्रि जागरण किया। सोलह कारण भावनाओं को निरन्तर भाता रहा और अन्तिम समय में समाधिमरण धारण किया। इन सब के प्रभाव से उसने त्रिलोकपूज्य तीर्थंकर गोत्र का बंध किया। मर कर वह

सर्वार्थ सिद्धि विमान में अहमिन्द्र हुआ। उसके शरीर की अवगाहना सात हाथ प्रमाण थी और तेतीस सागर की आयु प्राप्त की।

यथा समय सौधर्मेन्द्र ने कुबेर को भेजकर कुम्भपुर नगर का निर्माण किया। वहां की रानी प्रजावती की सेवा के लिये इन्द्र द्वारा दिक्कुमारियां तथा श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी आदि देवियां भेजी गई।

एक दिन रात्री के अन्तिम पहर में महारानी प्रजावती ने निम्न स्वप्न देखे। ऐरावत हाथी, सफेद बैल, गरजता हुआ सिंह, लक्ष्मी, दो मालाएं, चन्द्र मण्डल, सूर्य बिम्ब, सुवर्ण कलश, दो मछलियां, सरोवर, समुद्र, रत्नजड़ित सिंहासन, देव विमान, नागेन्द्र भवन, रत्नराशी व निर्धूम अग्नि।

ये सोलह स्वप्न और इनके बाद एक बैल का मुख में प्रवेश इस बात का प्रतीक था कि महारानी प्रजावती के गर्भ में तीर्थंकर ने अवतार ले लिया है। वह दिन चैत्र शुक्ला प्रतिपदा का था इसी समय राजा वैभव के जीव ने स्वर्ग से अहमिन्द्र का चोला छोड़कर प्रजावती के गर्भ में प्रवेश किया।

कुबेर ने गर्भ में भगवान के आने से छः मास पूर्व से रत्नवृष्टि आरम्भ कर दी थी और भगवान के आने के बाद नौ मास तक बराबर वृष्टि करता रहा। ठीक नौ मास बाद यानी मार्गशीर्ष सुदी एकादशी के दिन माता के गर्भ से तीर्थंकर का जन्म हुआ। वे शुक्लपक्ष के चन्द्रमा की भाँति बढ़ने लगे। उनका नाम मल्लिनाथ रखा गया।

युवावस्था आने पर भगवान ने राजपाट आदि को छोड़कर दीक्षा धारण कर ली और घोर तपस्या करके केवल ज्ञान प्राप्त किया। अन्त में सम्पूर्ण कर्मों का नाश करके निर्वाण प्राप्त किया।

अतः जिस प्रकार रत्नत्रय व्रत के प्रभाव से राजा वैभव ने तीर्थंकर पद प्राप्त करके निर्वाण प्राप्त किया उसी प्रकार जो प्राणी यह व्रत करेंगे वह अवश्य ही भवसागर से पार होंगे।

रत्नत्रय व्रत की जापें

१. ओ३म् ह्रीं श्री सम्यक्दर्शन प्राप्ताय नमः
२. ओ३म् ह्रीं श्री सम्यक् ज्ञान प्राप्ताय नमः
३. ओ३म् ह्रीं श्री सम्यक्चारित्र प्राप्ताय नमः

दुधारस द्वादशी व्रत

उज्जैन नगर में राजा पद्मप्रभ राज्य करता था उसकी महारानी का नाम पद्मावती था। उसी नगर में धनदत्त सेठ अपनी सेठानी स्वयं प्रभा के साथ सुखपूर्वक रहता था।

एक दिवस मिहिता श्रव मुनी नगर के उपवन में पधारे। बनमाली ने तुरन्त यह सूचना राजा को दी जिसे सुन राजा अति प्रसन्न हुआ और मुनी के दर्शनार्थ उसने प्रस्थान भेरी बजवाई।

राजा सहित नगर वासी मुनिराज के दर्शनार्थ हेतु उपवन में आये। पाँच अणुव्रत, सात शीलव्रत इन बारह व्रतों का उपदेश देते हुए मुनिराज ने जन समूह को दान का महत्व बताया।

उपस्थित समुदाय में धनदत्त सेठ भी था। उसने दान के महत्व को सुन कर मुनि को आहार दान देने का अपना निश्चय घर आकर सेठानी से कहा।

सेठानी ने कहा—'तुम्हारा विचार अति उत्तम

है। भक्तिपूर्वक मुनिराज को आहार देने से प्राणी भवसागर से पार हो जाता है परन्तु आज मैं रज-स्वला होने के कारण अपवित्र हूं इसलिए आहार नहीं दे सकती। जब मैं पवित्र हो जाऊंगी। तभी मुनी को पड़गाह सकती हूं।'

यह सुनकर अज्ञानी सेठ क्रोधित स्वर में बोला-'तू कंजूस है। तू मेरे आहार दान में विघ्न कर रही है। मुनिराज ने अपने उपदेश में कहा था जो आहार दान में विघ्न पैदा करते हैं वो पापी चंडाल कहलाते हैं तू भी पापिन है। तुझे मुनिराज के लिए अवश्य ही आहार बनाना होगा।

'मैं विघ्न नहीं कर रही, परन्तु रजस्वला के दिनों आहार देना अधर्म है'-सेठानी की बात सुन कर सेठ ने भड़क कर कहा—इस अधर्म का जो पाप लगेगा वो मैं अपने ऊपर ले लूँगा, तू आहार बना।

सेठानी को सेठ की बात माननी पड़ी। उसने आहार बनाया और मुनिराज को पड़गाह कर भक्ति पूर्वक आहार दिया मुनी आहार लेकर वापिस वन में चले गये।

कुछ दिनों उपराँत ही धनदत्त सेठ को कुष्ट हो गया। उसका सारा शरीर गल गया। वह कुष्ट की वेदना सहता हुआ समय व्यतीत करने लगा।

एक बार गुणमाल नामक मुनी उस नगर में पधारे। धनदत्त सेठ भी उनके दर्शनों को गया। उसने मुनी को विनयपूर्वक नमस्कार किया और कहा—'महाराज! मैंने ऐसे क्या पाप किये हैं जिसका मुझे यह फल भोगना पड़ रहा है।

मुनिराज बोले--'पुत्र! तेरी यह दशा अभुक्ति दान के कारण हुई है।'

इस दशा से छुटकारा पाने का उपाय पूछने पर मुनिराज ने बताया--'तुम दुधारस व्रत करो।'

'महाराज! आप मुझे इस व्रत को करने की विधि बतावें' —धनधत्त ने कहा।

भादों सुदी द्वादशी के दिन यह व्रत होता है। इस दिन श्री जिनेन्द्र देश का अभिषेक सहित अष्ट-द्रव से पूजन करना चाहिये। द्वादश वर्ष तक इस व्रत को करने के बाद इसका विधिपूर्वक उद्यापन

करना चाहिए। यदि उद्यापन की शक्ति न हो तो दुगने व्रत कर देने चाहिये। मुनिराज ने धनदत्त को व्रत की विधि बता दी।

मुनिराज से दुधारस व्रत लेकर धनदत्त सेठ वापिस घर आ गया और भक्तिपूर्वक इन व्रतों का समापान करके, विधिपूर्वक उद्यापन किया।

इन व्रतों के प्रभाव से धनदत्त का शरीर निरोग हो गया। अथान्तर एक दिन धनदत्त ने मुनी दीक्षा धारण करके घोर तपस्या की और स्वर्ग की राह सिद्ध शिला के लिए प्रस्थान किया।

अतः जो नरनारी ये व्रत करेंगे, वे इस भव में सुखों को भोगते हुए परभव में स्वर्ग के अधिकारी होंगे।

दुधारस व्रत की जाप

ओ३म् ह्रां ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रौं हंस अमृत वाहने नमः स्वाहा।

नन्दीश्वर व्रत कथा

एक कौशल देश स्वर्ग के समान है, जिसमें अयोध्यापुरी सुखों की खान है, जहां का राजा हर सेन था, जिसके गन्धारी, प्रियमित्र और रूपश्री नाम की तीन रानियाँ थी। जिसमें गन्धारी पटरानी थी। धर्म, अर्थ और कामको साधते हुए राजा तथा प्रजा बड़े सुख से जीवन व्यतीत कर रहे थे।

एक दिन राजा अपने कुटुम्बी तथा राज गणों के साथ बसन्त ऋतु का उत्सव मनाने के लिये जल क्रीड़ा वन क्रीड़ा आदि करने के लिए पास के उपवन में गये वहां से जब सब लौट रहे थे तो देखा एक लता मन्डप के अन्दर दो चारण ऋद्धि धारक मुनिराज विराजमान थे। जिनका नाम अरिञ्जय तथा अमितञ्जय था। सब नरनारी वहां पर मुनिराजों की वन्दना करके अर्घ चढ़ाकर चरणों में बैठ गये।

उपदेश आरम्भ हुआ अमृत वर्षा होने लगी। सब जन अमृत रूपी वाणी को पाकर तृप्त होने

लगे । राजा ने अपना पिछला भव पूछा । मुनिवर कहने लगे--

अहिच्छेत्र में एक कुबेरमित्र नाम का बनिक रहता था । उसके तीन पुत्र थे । बड़ा श्रीवर्मा, बीच का जयवर्मा और छोटा जयकीर्ति था ।

श्रीवर्मा ने एक दिन एक मुनि महाराज से अठाई व्रत लिया और उसको यथाशक्ति पालन कर अन्त समय में समाधिमरण लिया था । हे राजन् ! श्रीवर्मा का जीव तुम ही थे, पिछले उस व्रत के प्रभाव से आपने इस नगर में राजा वाहु और विमला रानी के यहां जन्म लिया है पिछले भव के तुम्हारे दोनों भाइयों (जय वर्मा और जय कीर्ति) ने सौधर्म मुनि महाराज के पास पांच अणुव्रत तथा नन्दीश्वर व्रत लिये और आयु के अन्त में समाधिमरण किया । ये दोनों जीव हस्तनापुर के राजा विमलवाहन और रानी श्रीधरा के युगलिया पुत्र हुए । जिनका नाम अरिञ्जय तथा अमितञ्जय रखा, ये दोनों हम ही हैं । श्री गुरु के समीप हमने दीक्षा ली तथा चारण ऋद्धि की प्राप्ति हुई । पिछले भव का प्रेम उमड़

आया है। हे राजन्! अब तुम फिर नन्दीश्वर व्रत का पालन करो, जिससे स्वर्ग तथा मोक्ष की प्राप्ति होगी।

व्रत की विधि इस प्रकार है—

इस भूलोक में अनन्त द्वीप और समुद्र हैं जो एक दूसरे को चुड़ियों के आकार से घेर हुए हैं। बीच में अपना जम्बू द्वीप है, फिर लवण समुद्र है। इस प्रकार यहाँ से आठवाँ द्वीप नन्दीश्वर द्वीप है।

जिसका कुल विस्तार १६३८४०,००० योजन प्रमाण है, इसके मध्य भाग में पूर्व की ओर एक श्याम स्वर्ण का अंजन गिरि पर्वत है। इसके चारों ओर चार वापियां [तालाब] हैं। प्रत्येक वापियों के चारों दिशाओं में अशोक, सप्तच्छद, चम्पक और आम्र नाम के चार वन है। प्रत्येक वापी में सफेद रंग का एक-एक दधि मुख पर्वत है। प्रत्येक वापी के बाह्य दोनों कोनों पर लाल रंग के २-२ रतीकर पर्वत है।

इस प्रकार इस द्वीप की प्रत्येक दिशा में एक अंजन गिरि, ४ दधि मुख और ८ रतिकर १३

पर्वत हैं और चारों ओर इसी प्रकार १३-१३ पर्वत हैं। कुल ५२ पर्वत हैं और प्रत्येक पर्वत पर १-१ जिनालय है। कुल ५२ पर्वत, ५२ मन्दिर, १६ वापियां और ६४ बन हैं

अष्टान्हिका पर्व में सौधर्म आदि इन्द्र व देवगण बड़ी भक्ति से इन मन्दिरों की पूजा आदि करते हैं पूर्व दिशा में कल्पवासी, दक्षिण दिशा में भवनवासी, पश्चिम दिशा में व्यन्तर और उत्तर दिशा में देव पूजन करते हैं। १-१ मन्दिर में १०८-१०८ विशाल कायप्रतिमाएं हैं और इनकी महिमा लिखना लेखनी की शक्ति के बाहर है। बड़ी ही अनुपम सुन्दर रचना है।

इस ही नन्दीश्वर द्वीप सम्बन्धी ये व्रत आठ दिन तक होते हैं।

जो भव्य प्राणी इस व्रत को करते हैं, जन्म, जरा तथा मरण का रोग नष्ट हो जाता है। यह व्रत एक वर्ष में तीनबार [आषाढ़, कार्तिक और फाल्गुण के अन्तिम आठ दिन में] होता है। सप्तमी को एकासन करे, फिर अष्टमी को व्रत करे। भगवान का अभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे और पांचों

परमेष्ठियों का ध्यान करे। इन दिनों को नन्दीश्वर व्रत कहते हैं और इसका फल दस लाख व्रत का लगता है।

दूसरे दिन नवमी को जिनेन्द्र देव की पूजा करे, पात्र दान दे और एकासन करे। इस दिन को अष्टविभूत कहते हैं। इसका फल १० हजार व्रतों का फल है।

तीसरे दिन (दशमी को) जिनेन्द्रदेव की पूजा करे, पात्र को दान दे, भोजन में केवल भात और पानी लेवे। इस दिन को त्रिलोकसार कहते हैं और इसका फल ६० हजार व्रतों का फल है।

चौथे दिन (११) का उपवास करे। इस दिन का नाम चतुर्भुज है। फल एक लाख व्रतों का है तथा भव का नाश होता है।

पाँचवे दिन (१२) एकासन करे। हयलक्षण इसका नाम है और फल ८४ लाख व्रतों का है।

छठे दिन जिन पूजा, दान आदि करे। भोजन में एक बार चावल आमिली ही लेवे। इस व्रत का नाम स्वर्ग सोपान है, ४० लाख व्रतों का फल है।

सातवें दिन जिन पूजा, दान-सन्मान आदि करे।

इसका नाम सब सम्पत्ति है। भोजन में एक बार भात इमली लेवे फल १ लाख व्रतों का है।

आठवें दिन (अन्तिम चौदस को) व्रत करे। व्रत की कथा सुने, पात्र दान देवे। पूजन व आत्म-चिन्तवन करे। साढ़े तीन करोड़ व्रतों का फल होना है। इस प्रकार आठ वर्ष तक करे।

उत्तम तो आठ वर्ष, मध्यम पाँच वर्ष और लघु तीन वर्ष होता है।

उद्यापन में वेदी पर माँडला रचकर महा अभि-षेक करके पूजा करे। मन्दिर में ध्वजा, कलश, छत्र, सिंहासन आदि देवे तथा चारों प्रकार का दान शक्ति अनुसार करे, विनय प्रभावना आदि करावे। शक्ति न हो तो दुगने व्रत करे।

इस व्रत के पालन करने से राजा अनन्तवीर्य चक्रवर्ति हुआ। महासती मैनासुन्दरी ने अपने पति का कुष्ठ दूर किया तथा और बहुत से जीवों ने अपनी आत्मा का कल्याण किया।

राजा हरसेन ने भी अपने सब परिवार सहित वह व्रत लिया, व्रत करके उद्यापन किया। अन्त समय में समाधिमरण किया और मर कर देव तथा समय पाकर मुक्ति में जायेगा।

नन्दीश्वर (अष्टान्हिका) व्रत जाप

समुच्चय—ओ३म् ह्रीं श्रीनन्दीश्वरसंज्ञाय नमः

आठदिन की क्रम से आठ जापें:—

१. ओ३म् ह्रीं नन्दीश्वरसंज्ञाय नमः
२. ओ३म् ह्रीं अष्टमहाविभूतिसंज्ञाय नमः
३. ओ३म् ह्रीं त्रिलोकसागरसंज्ञाय नमः
४. ओ३म् ह्रीं चतुर्मुखसंज्ञाय नमः
५. ओ३म् ह्रीं पंचमहालक्षणसंज्ञाय नमः
६. ओ३म् ह्रीं स्वर्गसोपानसंज्ञाय नमः
७. ओ३म् ह्रीं सिद्धचक्रसंज्ञाय नमः
८. ओ३म् ह्रीं इन्द्रध्वजसंज्ञाय नमः

*

ऋषि पंचमी व्रत

श्लोक—सुरी रग नराधीशं, ललितांघ्रि सरोरुहं।
नत्वा नेमि जिनाधीशं, वक्ष्ये श्री पंचमी कथां॥

आषाढ़ शुक्ला पंचमी के दिन प्रातःकाल स्नान कर धुले वस्त्र पहनकर पूजा की सामग्री ले जिनालय जावे, वहाँ तीन प्रदक्षिणा दे ईर्यापथ शुद्धि कर भगवान का साष्टांग नमस्कार करे तथा दीपक जलावें और भगवान की प्रतिमा विराजमान कर पंचामृत पूर्वक अभिषेक करें। अष्ट द्रव्यों से बड़ी भक्ति के साथ पूजन करें। इस मन्त्र का जाप करें।

ओं ह्रीं अर्हं अर्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः स्वाहा।

१०८ पुष्पों द्वारा जाप्य देवे

इस प्रकार पांच वर्ष पांच महीने तक कुल पैंसठ ६५ उपवास करना। फिर व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना। चौबीस तीर्थंकर भगवान का महाभिषेक कर पूजन करना। श्री सीमन्धर भगवान का ध्यान पूजन व ओ३म् महामन्त्र के सवा लक्ष जाप करना। ब्रह्मचर्य का पालन करना। दशांग हवन करना।

*

पुष्पांजली व्रत कथा

इस जम्बूद्वीप क्षेत्र के मंगलावर्त देश में रत्न-संचयपुर नामक नगर था जहाँ राजा वज्रसैन राज्य करता था। उसकी पत्नी का नाम जयवंती था। उसके कोई पुत्र नहीं था। उसकी तीव्र इच्छा थी कि मेरे एक पुत्र उत्पन्न हो जाये। एक दिन वह जिन दर्शन के लिये जिनालय में गई जहाँ ज्ञानोदधि नामक मुनिराज विराजमान थे। रानी ने विनयपूर्वक नमस्कार करके निवेदन किया-'महाराज! मेरे कोई संतान नहीं है। आप बताइये कि मुझे संतान होगी या नहीं।'

मुनिराज ने कहा-पुत्री! तेरे एक पुत्र होगा और वह छः खंड का अधिपति चक्री होगा। अंत में, वह कर्मों का नाश करके मुक्ति भी प्राप्त करेगा।

मुनिराज के वचन सुनकर रानी के हर्ष का ठिकाना न रहा। नौ मास व्यतीत होने पर रानी के अत्यन्त शुभ लक्षणों वाला पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम रत्नशेखर रखा गया।

एक दिन रत्नशेखर अपनी युवावस्था में क्रीड़ा मंडप में बैठा हुआ था। तभी आकाश मार्ग से मेघवाहन विद्याधर गुजर रहा था। ज्यूँ ही उसकी दृष्टि रत्नशेखर पर पड़ी त्यूँ ही उसके मन में रत्नशेखर के प्रति अत्यन्त प्रेम उमड़ आया। प्रसन्न होकर उसने रत्नशेखर को पाँच सौ विद्यायें प्रदान कर दीं। इस प्रकार दोनों में प्रगाढ़ मित्रता हो गई।

एक दिन दोनों मित्र सुमेरु पर्वत पर वंदना के लिये गये। वहाँ दोनों ने बड़े भक्ति भाव से सिद्धकूट चैत्यालय में जाकर पूजन किया। जब वे वहाँ से वापिस आ रहे थे, तभी उन्हें मदन मंजूषा नामक एक सुन्दर राजकन्या के स्वयंवर में जाना पड़ा। स्वयंवर में अनेकों राजकुमार आये थे परन्तु राज-कन्या ने वरमाला रत्नशेखर के गले में डाल दी। यह बात एक विद्याधर को बुरी लगी और वह रत्नशेखर से युद्ध करने को तैयार हो गया।

युद्ध में रत्नशेखर ने उस विद्याधर को परास्त कर दिया और मदनमंजूषा को लेकर अपने नगर वापिस आ गया। आकर उसने माता-पिता को

प्रणाम किया और सुखपूर्वक समय व्यतीत करने लगा।

एक दिन रत्नशेखर अपने मित्र व परिवार सहित चारण मुनि के दर्शन हेतु नगर के उद्यान में गया और वंदना करके धर्म उपदेश सुनने बैठ गया। मुनिराज का उपदेश सुनने के बाद उसने पूछा- 'महाराज! हम तीनों का पूर्व जन्म में क्या संबंध था, मेरी यह जानने की बड़ी इच्छा है'

अवधि ज्ञान से जानकर, मुनिराज उनके पूर्व-भव का वृत्तांत कहने लगे--मृणाल नगर में श्रुतिकीर्ति नामक एक राज मंत्री था। उसकी स्त्री का नाम बंधुमती था। एक दिन दोनों बनक्रीड़ा के लिये गये। वहाँ उसकी स्त्री को एक साँप ने डस लिया। उसकी मृत्यु हो गई। स्त्री का मृत शरीर देखकर, मंत्री को वैराग्य उत्पन्न हो गया। उसने एक मुनि-राज से जिन दीक्षा लेकर घोर तपस्या की।

कुछ दिन तो उसने तपस्या की परन्तु बाद में वह भ्रष्ट हो गया। वह पुनः घर आकर परिवार के बीच रहने लगा। उसके एक बुद्धिमती कन्या थी,

उसका नाम प्रभावती था।

प्रभावती ने जब अपने पिता को इस प्रकार मुनि पद से भ्रष्ट होते देखा तो उसे अत्यन्त दुख हुआ। वह विनम्र स्वर में पिता से बोली-'पिताजी! जब आपको घर में ही रहना था तो मुनि क्यों बने। आप पहले क्यों तो सुमेरु पर चढ़े थे और जब चढ़े ही थे तो क्यों इस प्रकार लाज गँवा कर फिर भवसिंधु में गिर पड़े।'

सच्ची बात हमेशा कड़वी लगती है। कन्या की यह बात मंत्री को बहुत बुरी लगी। क्रोधित होकर उसने पुत्री को विद्या के बल पर घोर जंगलों में छुड़वा दिया। प्रभावती को इससे बहुत कष्ट हुआ किन्तु उसने जिनेन्द्र स्मरण का अवलम्ब नहीं छोड़ा। उसकी जिन भक्ति से प्रसन्न होकर विद्या की वही अधिष्ठात्री देवी फिर उसके पास आई और बोली-'पुत्री! बता तू कहाँ जाना चाहती है। मैं तुझे वहीं पहुँचा दूँगी।'

'आप मुझे कैलाश पर्वत पर पहुँचा दो। मैं वहाँ के जिनालय के दर्शन करना चाहती हूँ'-प्रभावती की इस इच्छा पर देवी ने उसे तुरंत कैलाश पर्वत

पर पहुँचा दिया।

प्रभावती ने जिनालय में आकर भक्ति भाव से पूजा की। तभी वहाँ पद्मावती देवी और एक देव दर्शन को आये। प्रभावती को उन्हें वहाँ देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने उत्सुकतावश पूछा-'देवी! आज क्या बात है जो आप लोग यहाँ आये हैं।'

'आज से पुष्पांजलि व्रत है'-देवी ने उत्तर दिया। व्रत की विधि पूछने पर देवी ने बताया-'यह व्रत भादों सुदी पंचमी से पाँच दिन तक किया जाता है। इन दिनों शक्तिनुसार पोषघोपवास करना चाहिये प्रतिदिन भगवान की पूजा करनी चाहिये। तीनों काल सामायिक करे। इस प्रकार पाँच वर्ष तक यह व्रत करना चाहिए। फिर इसका उद्यापन करना चाहिये। उद्यापन में अपनी ओर से कोई शास्त्र प्रकाशित करवा कर बँटवाये या शास्त्र बँटवाने के लिये दान करे। यदि उद्यापन की शक्ति न हो तो दूने काल तक यह व्रत करें।

प्रभावती पद्मावती की बातों से बड़ी प्रभावित हुई। उसने उसी समय देवी से यह व्रत ले लिया

और अपना सारा समय व्रत करती हुई धर्म ध्यान में व्यतीत करने लगी। उसे व्रत से डिगाने के लिये तप विद्या वहाँ आई। उसने तीन दिन तक विभिन्न प्रयासों द्वारा प्रभावती को विचलित करन की चेष्टा की परन्तु असफल रही। तभी वहाँ फिर पदमावती देवी आई। भयभीत होकर तप विद्या वहाँ से भाग ली। उस कन्या ने तभी सन्यासमरण किया और मर कर सोलहवें स्वर्ग में जाकर महर्धिक देव बन गई।

देव बन कर, एक बार उसने सोचा कि मुझे अपने पूर्वभव के पिता को जाकर समझाना चाहिए। वह भ्रष्ट हो गया है। यह सोचकर वह देव श्रुतिकीर्ति के पास आया और उसे समझाकर धर्म मार्ग में स्थिर किया। श्रुतिकीर्ति ने सन्यासमरण धारण किया। उत्तम भवों से उसका मरण हुआ। परिणामस्वरूप वह भी सोलहवें स्वर्ग में जाकर देव हो गया। वधुमती का जीव भी उसी स्वर्ग में देव हुआ।

वहाँ से चयकर प्रभावती का जीव यानी तू रत्नशेखर हुआ है। माता का जीव मदन मंजूषा

और श्रुतिकीर्ति का जीव मेघवाहन हुआ।

मुनिराज से तीनों के पूर्वभव का वृत्तांत सुन कर रत्नशेखर को आगे के लिये चिन्ता होने लगी। अतः उसने मुनिराज से पुष्पांजलि व्रत ले लिये। इस प्रकार बहुत समय तक चक्रवर्ती पद भोगने के बाद उसने त्रिगुप्ति मुनि से जिन दीक्षा ले ली। उसके साथ मेघवाहन भी मुनि हो गया और दोनों ने अघतिया कर्मों का नाश करके मुक्ति लक्ष्मी का वरण कर लिया।

इस प्रकार जो प्राणी इस व्रत को करेगा, निश्चय ही वह अजर अमर पद प्राप्त करेगा।

पुष्पांजलि व्रत की जापें

समुच्चय-ओं ह्रीं पंच मेरु सम्बन्धी जिनालयेभ्यो नमः

प्रत्येक दिन की जापें

१. ओं ह्रीं सुदर्शन मेरुस्थ जिनालयेभ्यो नमः

२. ओं ह्रीं विजयमेरुस्थ जिनालयेभ्यो नमः

३. ओं ह्रीं अचल मेरुस्थ जिनालयेभ्यो नमः

४. ओं ह्रीं विद्युन्माली मेरुस्थ जिनालयेभ्यो नमः

५. ओं ह्रीं मन्दर मेरुस्थ जिनालयेभ्यो नमः

कोकला पंचमी व्रत

अबै कोकला पंचमी, बरत कहूँ विधि सार।
शील सहित प्रोषध किये, सुर पद को दातार ॥

पषि अँधारय मास अषाढ़ ही,
करि पौषध कातिक लौं सही।
तिथि सुपंचम के उपवास ही,
पूर्ति सुकोकिल पंचमी को लही।

मरयादा या बरत की, सुनहु भवि परवीन।
पाँच बरष लौं कीजिये, त्रिविध सुहृता कीन ॥

पंचमी व्रत

फागुण अषाढ़ कातिक एह,
सित पंचम तैं व्रत को लेह।
पैंसठ प्रोषध करिए तास,
बरस पाँच पाँच परिमास। १।
स्वेत पंचमी को व्रत धार,
कमल श्री पायो फल सार।
भव सदंत तब मिलियो आय,
तिनहूँ व्रत कीनो मन लाय ॥२॥
तास चरित माहे विस्तार,
वरनन कीयो सब निरधार।
अजहूं नर तिय करि हैं सोय,
त्रिविधि सुधि तैसों फल होय ॥३॥

मुक्तावली व्रत

इस भरत क्षेत्र में अङ्ग देश था। उसमें चम्पापुरी नगरी थी। उसमें सोम शर्मा नामक एक ब्राह्मण था। उसकी पुत्री जब युवती हुई तो एक दिन अपने मद के कारण उसने मुनिराज को नग्न देखकर उनकी अपशब्दों से बड़ी निन्दा की और मन में बड़ी ग्लानि की। इससे उसने महा-पाप का बन्ध कर लिया। इस पाप के कारण मरण के बाद उसे नरक गति मिली, जहाँ अनेक प्रकार के कष्ट भोगने पड़े। इसी प्रकार भव-भ्रमण करती हुई एक बार वह एक ब्राह्मण के घर कन्या हुई। उसका नाम जिनमिका पड़ गया। उसके शरीर से अत्यन्त दुर्गन्ध आती थी। उससे सभी घृणा करते थे और उसके पास कोई नही जाता था। बेचारी जूठन खा खाकर बड़े कष्ट से निर्वाह करती थी।

एक दिन उसने एक मुनिराज के दर्शन किये। दर्शन करने के बाद बड़ी दुःखित होकर वह उनसे

पूछने लगी—'महाराज ! मैने ऐसे क्या पाप किये है, जिससे मुझे इतने कष्ट भोगने पड़ रहे हैं।' तब मुनिवर ने उसे पूर्व भव का वृत्तान्त सुनाकर कहा—कि 'तूने मुनिराज की निन्दा की थी। उसके प्रभाव से तुझे इतने कष्ट उठाने पड़ रहे है।' यह सुनकर दुर्गन्धा ने कहा—'महाराज! मुझे ऐसा व्रत दे दीजिये, जिससे मेरे सारे रोग शोक कट जायें और मुझे उत्तम भव मिल जाय।' मुनिराज यह सुनकर बड़े प्रसन्न हुए और बोले —तू मुक्तावलीव्रत धारण कर। इससे तेरे सारे पापो का नाश हो जायगा और अतुल सुख सम्पत्ति भी प्राप्त होगी।' दुर्गन्धा ने इस पर मुनिराज से इस व्रत की विधि पूछी तो मुनिवर ने कहा—भादों सुदी सप्तमी को यह व्रत किया जाता है। उस दिन मन्दिर में जाकर भक्ति भाव से पूजा करनी चाहिए इस व्रत की कथा सुननी चाहिये। उस दिन किसी प्रकार का आरम्भ न करे, सयम पाले। दूसरे दिन प्रातः होने पर शुद्ध भोजन करे। आश्विन वदी छठ को फिर पूर्ववत व्रत करे। इसी प्रकार आश्विन वदी तेरस को

तीसरा व्रत करे, आश्विन सुदी ग्यारस को चौथा, कार्तिक वदी वारस को पांचवां, कार्तिक सुदी तीज को छठवां, कार्तिक सुदी ग्यारस को सातवां, मगसिर वदी ग्यारस को आठवां, मगसिर सुदी तीज को नौवां व्रत करे। इसी प्रकार नौ वर्ष तक मन, वचन और काय की शुद्धतापूर्वक व्रत करे। जब व्रत पूरा हो जाय, तब उद्यापन करे उद्यापन में मन्दिर में शास्त्र दान करें, दूसरों को शास्त्र दे, अपनी ओर से शास्त्रों के प्रचार के लिये धन दे। यदि उद्यापन की शक्ति न हो तो दूने व्रत करे।

दुर्गन्धा ने विधि सुनकर तत्काल गुरुदेव से व्रत अङ्गीकार कर लिये और उस व्रत के प्रभाव से प्रथम स्वर्ग में देव हुई। वहाँ से चलकर मथुरा नरेश श्रीधर राजा के घर पद्मरथ नामक पुत्र हुई। एक दिन कुमार वन क्रीड़ा को गया हुआ था। वहां वन में एक गुफा के भीतर एक मुनि राज को देखकर उसने बड़ी विनय से वन्दना की और उनसे प्रश्न किया—महाराज! ऐसा कोई व्यक्ति है, जिसकी प्रभा आपसे अधिक हो।

मुनिराज ने स्वीकृतिसूचक सिर हिलाकर कहा—'हाँ हैं, वे हैं जगतपूज्य भगवान। वे चंपापुर में विराजमान है। उनकी प्रभा दिव्य है। वे तो संसार-समुद्र के लिये जहाज के समान है।'

यह सुनते ही राजकुमार मुनिराज की वन्दना करके समवशरण में पहुँचा। वहाँ भगवान की भक्तिभाव सहित वन्दना करके मुनि दीक्षा ले ली। उसने बड़ी तपस्या की। पश्चात् वह भगवान का गणधर हो गया और इस प्रकार अपने तपश्चरण द्वारा अष्ट कर्मों का नाश कर निर्वाण प्राप्त कर लिया।

जो नरनारी इस व्रत को पालते है, वे संसार के सुखों को पाते हैं और अन्त में मुक्ति प्राप्त करते हैं।

चंदन षष्टी व्रत

भादव वदी षष्ठी उपवास चन्दन षष्ठी व्रत
धार तास मन वचकाय शील व्रत पालो तसु
परमाण वरष छह धार

सुगंध दशमी व्रत

विजयार्धपर्वत की उत्तर श्रेणी में शिव-मन्दिर नामक एक नगर था। वहाँ प्रीतकर नामक एक जैन विद्याधर था। उसकी स्त्री कमलावती थी जो अप्सराओं से अधिक सुन्दर थी। उसी नगर में सागरदत्त सेठ था, जो अपने जैन व्रतों का पालन बड़ी दृढ़ता से करता था। उसकी स्त्री धनदत्ता और पुत्री मनोरमा थी। एक बार सुगुप्त मुनिराज सेठ के घर पधारे। उन्हें देखकर मनोरमा के मन में बड़ी ग्लानि हुई और वह मुनि की निन्दा करने लगी। इतना ही नहीं, उसने अपने मुख का पान उनके ऊपर थूक दिया। मुनिराज आहार में अन्तराय जान-कर बड़े समताभाव से वहाँ से वन को चले गये और अपने ध्यान में लीन हो गये। किन्तु मनोरमा को इससे इतना जबरदस्त पाप का बन्ध हो गया कि वह मृत्यु के बाद गधी बनी। फिर वह कुत्ती और सूकरी की योनि में उत्पन्न

हुई। वहां से मरकर वह तिलकपुर नरेश विजय सेन और रानी चित्ररेखा के घर दुर्गन्धा नाम की पुत्री हुई। उसके शरीर से महा दुर्गन्ध आती थी। एक बार एक मुनिराज राजा के घर आहार के लिए पधारे। राजा ने उन्हें बड़े भक्ति-भाव से पड़गाया। आहार के पश्चात् राजा ने मुनिराज से पूछा—महाराज! मेरी इस पुत्री के शरीर से बड़ी दुर्गन्ध आती है। यह किस जन्म और किस पाप का फल है। मुनिराज ने कहा कि इसने मनोरमा के भव में मुनि-निन्दा की थी। उस पाप के फल से इसे कई बार तिर्यञ्च योनि धारण करनी पड़ी और उसी के कारण इसे इस योनि में दुर्गन्ध शरीर प्राप्त हुआ है। मुनि महाराज से अपने भवान्तरों की कथा सुनकर दुर्गन्धा ने हाथ जोड़कर निवेदन किया—महाराज! मुझे अब कोई ऐसा व्रत दीजिये, जिससे मेरा शरीर निरोग हो जाय। दयानिधान मुनि बोले—पुत्री! तू सुगन्ध दशमी व्रत कर। इससे सम्पूर्ण रोग शोक मिट जायेंगे। दुर्गंधा ने यह सुनकर फिर निवेदन किया—

मुनिराज ! इसकी क्या विधि है ? यह बताने की कृपा कीजिये। तब मुनिराज ने उत्तर दिया—यह व्रत भाद्रपद शुक्ला दशमी को किया जाता है। इस दिन भगवान् शीतलनाथ को भाव-भक्ति सहित पूजन करनी चाहिए। और सब प्रकार का आराम छोड़कर धर्म में मन लगाना चाहिए। इस प्रकार यह व्रत लगातार दस वर्ष तक करना चाहिए। जब व्रत पूर्ण हो जाय तो बड़े उत्साह पूर्वक इसका उद्यापान करना चाहिए। उस दिन किसी तीर्थ या मन्दिर के जीर्णोद्धार के निमित्त दान करे, दस शास्त्रों का अपनी ओर से दान करे, जिससे जैन धर्म का प्रचार हो अथवा अपनी ओर से कोई शास्त्र प्रगट कराकर वितरण करावे। निर्धन साधर्मी जनों को वात्सल्य भाव से भोजन करावे। जो इतना न कर सके, वह अपनी शक्ति के अनुसार शास्त्र दान करे।

क्योंकि जिनवाणी के दान से सर्व सुख-दाता जैन धर्म का प्रचार होता है। दुर्गंधा ने विधि सुनकर मुनि महाराज से यह व्रत ले लिया। उसके कारण उसके शरीर की सारी

दुर्गन्धि चली गई। और आयु पूर्ण होने पर वह द-वे स्वर्ग में जाकर देव हुई। वहां वह देव जिन-चैत्यालयों की नित्य वदना किया करता।

भूतितिलकपुर के नरेश का नाम महीपाल था और रानी का नाम मदन-सुंदरी। दुर्गंधा का जीव स्वर्ग से चलकर उनके घर पुत्री हुआ और उसका नाम मदनावती रक्खा गया। वह अत्यन्त सुन्दरी थी और उसके शरीर से सुगन्धि आती थी। उसका विवाह कौशाम्बीपुर नरेश मदन के पुत्र पुरुषोत्ताम के साथ हो गया। वहां उसने अनेक प्रकार के भोग भोगे। एक दिन सब लोग मुनिराज के दर्शनार्थ गये। वहाँ वन्दना करके सब बैठे और मुनिराज से धर्मोपदेश सुना। उपदेश सुनने के बाद राजा ने हाथ जोड़कर मुनि महाराज से पूछा—हे मुनिन्द्र ! मेरी रानी के शरीर से सुगन्धि आती है। इसका क्या कारण है। और किस पुण्य से इसनें मनोरम रूप पाया है। मुनि महाराज ने राजा को रानी के पूर्वभवों का वृत्तान्त कह सुनाया। भवान्तर का वृत्तान्त सुनकर राजा और रानी को वैराग्य

उत्पन्न हो गया और उन्होंने मुनिराज से दीक्षा ले ली। राजा मुनि बन गये और रानी ने अर्जिका के व्रत ले लिये। उसने बड़ी तपस्या की और मरण कर वह सोलहवें स्वर्ग में प्रतेन्द्र हुई। उसे बाईस सागर की आयु मिली। वहां अपनी आयु पूर्ण कर वह अमरकेतु नरेश के घर में राजपुत्र हुआ। उसका नाम कनककेतु रक्खा गया। उसके शरीर को आभा सुवर्ण जैसो थी। वह काफी समय तक सांसारिक भोग भोगता रहा। एक बार नगर में मुनि पधारे। कनककेतु उनके दर्शनार्थ गया। वहाँ मुनि के उपदेश सुनकर उसे भोगों से वैराग्य हो गया और तत्काल मुनि-दीक्षा ले ली। मुनि बनकर उसने घोर तपस्या की। उसने घातिया कर्मो का नाश करके केवल ज्ञान प्राप्त कर लिया। और अन्त में अघातिया कर्मों का नाश करके वे सिद्ध परमेष्ठी बन गये।

इस प्रकार उसने सुगन्ध दशमी व्रत के कारण ही अपना भव बन्धन काट लिया। इसी प्रकार इस व्रत का जो पालन करेगा, वह भी अपने भव-बन्धनों का उच्छेद करेगा।

त्रैलोक्य तिलक (रोटतीज) व्रत कथा

हस्तिनापुर नगर में कामदुक राजा राज्य करते थे। राजा कामदुक बहुत नीतिवान और बलवान थे। इनकी रानी का नाम कमल-लोचना था। कमललोचना यथार्थ में कमल-लोचना ही थी—उसके नेत्र कमलों के समान अतिशय सुन्दर थे। राजा और रानी धर्मसेवन करते हुए आनन्द से समय व्यतीत करते थे। समय पाकर उनके विशाखदत्त नाम का पुत्र हुआ। राजा कामदुक के एक वरदत्त नाम का मन्त्री था। मन्त्री की पत्नी का नाम विशालाक्षी था। उन दोनों से एक विजय सुन्दरी नाम की पुत्री हुई जो बहुत ही रूपवती थी। राजकुमार विशाखदत्त ने तरुण होने पर उसी विजयसुन्दरी के साथ विवाह किया था।

कितने ही दिन बाद राजा कामदुक की मृत्यु हो गई, जिससे समस्त परिवार और प्रजा-

जन बहुत ही दुखी हुए। परन्तु मात्र शोक करने से ही तो गई हुई वस्तु की प्राप्ति नहीं हो सकती।

राजकुमार विशाखदत्त ने राज्य का भार ग्रहण किया और नीतिपूर्वक प्रजा का पालन करना शुरू कर दिया, परन्तु पिता के वियोग से वह हमेशा खेद खिन्न रहा करता था। एक दिन वह उदासचित्त बैठा हुआ था कि वहाँ विहार करते हुए ज्ञान सागर नाम के मुनिराज आये। राजा ने उठकर उन्हें नमस्कार किया और उच्चासन पर बैठाकर उनकी बड़ी स्तुति की। मुनिराज ने धर्मवृद्धि रूप आशीर्वाद देकर राजा विशाखदत्त को इस रीति से धर्मोपदेश दिया कि जिससे उसका समस्त शोक नष्ट हो गया। उपदेश देकर मुनिराज यथेष्ट स्थान पर विहार कर गये और राजा न्यायपूर्वक प्रजा का पालन करने लगा।

किसी समय उस नगरी में अनेक अर्यिकाओं के साथ विहार करती हुई संयमभूषण नाम की

साक्षीपूर्वक ग्रहण किया और यत्न सहित उसका पालन किया। आयु के अन्त में समाधिमरण करके अच्युत नाम के १६वें स्वर्ग में देव हुई। व्रत के प्रभाव से उसका स्त्रिलिंग छिद गया। वहाँ उसने मनवांछित अनेक सुख भोगे और अकृत्रिम चैत्यालयों के साक्षात् दर्शन तथा धर्म-ध्यान करते हुए समय बिताया।

आयु पूर्ण होने पर वह मगधदेश के कंचन-पुर नगर में राजा सुपिंगल और रानी कमललोचना के सुमंगल नाम का पुत्र हुआ। एक दिन वह अपने इष्ट मित्रों के साथ बन क्रीड़ा के लिए गया था कि तो वहाँ उसकी दृष्टि एक दिगम्बर मुनि-राज पर पड़ी मुनिराज के दर्शन करते ही राज-पुत्र सुमंगल के हृदय में भारी ममता उत्पन्न हो गई। वह मुनिराज को नमस्कार कर विनय सहित उनके पास ही बैठ गया और पूछने लगा कि हे ऋषिराज! आपके दर्शनकर मेरे हृदय में भारी ममता उत्पन्न हो रही है सो इसका क्या कारण है? राजपुत्र के वचन सुनकर मुनिराज

कहने लगे कि हे वत्स ! तू इस भव से तीसरे भव में हस्तिनापुर के राजा विशाखदत्त की विजय-सुन्दरी नाम की रानी थी, उस समय में संयम-भूषण नाम की आर्यिका थी, मेरे उपदेश से तूने त्रैलोक्य तिलक व्रत (त्रिलोक तीजव्रत) ग्रहण किया था और उसके प्रभाव से तू सोलहवें स्वर्ग में देव हुई। वहाँ से चलकर यहाँ राजा सुपिगल की कमललोचना रानी से सुमंगल नाम का राजपुत्र हुआ है और मेरा जीव भी संयम-भूषण आर्यिका के बाद स्वर्ग में देव हुआ। तथा वहाँ से चलकर यहाँ मनुष्य पर्याय में उत्पन्न हुआ। संसार को अनित्य समझकर मैंने जिन दीक्षा धारण कर ली है। पूर्व भव के स्नेह के कारण ही मुझे देखकर तेरे हृदय में ममता उत्पन्न हुई है। यह जीव संसार मे इसी प्रकार घूमता फिरता है इसलिए किसी से हर्ष विषाद नहीं करना चाहिए। मुनिराज के वचन सुनकर सुमंगल को वैराग्य उत्पन्न हो गया और उसने मुनि दीक्षा लेकर मोक्ष प्राप्त किया।